किसी संभावित अंतरिक्ष युध्द से कैसे निपटेगा भारत

भारत के डीईडब्ल्यू कार्यक्रम को तर्कसंगत बनाया गया है क्योंकि चीन भी डीईडब्ल्यू के विकास और अंतिम रूप से तैनाती पर पूरी मज़बूती और गंभीरता से काम कर रहा है, जो एक तरह से अनुचित अपेक्षा नहीं है।

भारत के प्रमुख रक्षा अनुसंधान संगठन, 'रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन' (DRDO) ने सितंबर की शुरुआत में कहा था कि वह 'डायरेक्टेड एनर्जी वेपन्स (DEW)' यानी निर्देशित ऊर्जा हथियार, विकसित कर रहा है. यह घोषणा महत्वपूर्ण थी लेकिन आश्चर्यजनक नहीं, क्योंकि साल 2017 से यह स्पष्ट था कि डीआरडीओ, डीईडब्ल्यू (DEW) पर काम कर रहा था. हालांकि, जो कुछ भी नहीं बताया गया है वह यह है कि क्या डीआरडीओ का वर्तमान डीईडब्ल्यू कार्यक्रम भारत की अंतरिक्ष युद्ध की ज़रूरतों को पूरा कर सकता है. भारत के डीईडब्ल्यू कार्यक्रम को तर्कसंगत बनाया गया है क्योंकि चीन भी डीईडब्ल्यू के विकास और अंतिम रूप से तैनाती पर पूरी मज़बूती और गंभीरता से काम कर रहा है, जो एक तरह से अनुचित अपेक्षा नहीं है. फिर भी, अब तक के रूप में यह कार्यक्रम इस बात के बारे कोई ख़ास जानकारी नहीं देता है कि क्या डीईडब्ल्यू, अंतरिक्ष तक विस्तारित होंगे.

इन हथियारों के दूर अंतरिक्ष में मौजूद लक्ष्यों और संपत्ति के ख़िलाफ़ प्रभावी होने की संभावना नहीं है. डीईडब्ल्यू आम तौर पर इलेक्ट्रॉनिक जैमर से लेकर लेज़र तक सभी हथियार प्रणालियों को कवर करेगा.

डीआरडीओ के अंतर्गत विकसित किए जा रहे अधिकांश डीईडब्ल्यू, अधिकतर स्थलीय युद्ध तक ही सीमित हैं. यहाँ, लेखक स्थलीय विस्तार का उपयोग ज़मीन, समुद्र और वायु युद्ध यानी ऐसे डीईडब्ल्यू के परिप्रेक्ष्य में कर रहा है जो पृथ्वी के वातावरण के भीतर परिचालित हो सकते हैं. विकसित हो रहे लेज़र हथियारों की ताकत उतनी ही बेहतर साबित हो सकती है (अगर वह परीक्षण मानकों और संचालन को पूरा करने में संतोषजनक सिद्ध होते हैं) कि वह कम दूरी पर स्थलीय लक्ष्य के ख़िलाफ़ प्रभावी हों. इन हथियारों के दूर अंतरिक्ष में मौजूद लक्ष्यों और संपत्ति के ख़िलाफ़ प्रभावी होने की संभावना नहीं है. डीईडब्ल्यू आम तौर पर इलेक्ट्रॉनिक जैमर से लेकर लेज़र तक सभी हथियार प्रणालियों को कवर करेगा. जैसा कि जी. सतीश रेड्डी, जो रक्षा विभाग के अनुसंधान और विकास प्रमुख हैं, ने कहा है, "वर्तमान परिदृष्य में डीईडब्ल्यू बेहद महत्वपूर्ण हैं. दुनिया उनकी ओर बढ़ रही है. भारत में भी हम कई तरह के प्रयोग कर रहे हैं. हम 10-20 KW [हथियार] विकसित करने के लिए इस

क्षेत्र में पिछले तीन से चार वर्षों से काम कर रहे हैं."

बड़ा सवाल यह है कि क्या डीआरडीओ के पास कक्षा में मौजूद (in-orbit) अंतरिक्ष यान के ख़िलाफ़ काम करने वाला सक्रिय डीईडब्ल्यू कार्यक्रम है. इन डीईडब्ल्यू सिस्टम में सह-कक्षीय डीईडब्ल्यू शामिल हो सकते हैं, जो ज़मीन या स्थलीय लक्ष्यों पर हमला करने के लिए इन-ऑर्बिट टारगेट या स्पेस बॉर्न डीईडब्ल्यू को शामिल करते हैं और ग्राउंड-बेस्ड डीईडब्ल्यू जो स्पेस बॉर्न टारगेट के खिलाफ हमलों के लिए तैयार होते हैं. आज तक, जैसा कि रेड्डी के कथन से पता चलता है, सार्वजनिक पटल पर इस बात को इंगित करने वाला कोई भी तथ्य मौजूद नहीं है कि भारत के पास विस्तृत अंतरिक्ष हथियार कार्यक्रम है, जिसमें डीईडब्ल्यू शामिल हों. यह पूरी तरह से संभव है कि ऐसा गोपनीयता के कारणों से हो, क्योंकि डीआरडीओ का अंतरिक्ष हथियार कार्यक्रम उच्च स्तर पर गोपनीय और वर्गीकृत उपक्रम है, और इसलिए एजेंसी और सरकार यह समझती है, कि गोपनीयता बनाए रखने में ही बुद्धिमानी है.

आम तौर पर डीआरडीओ दो सबसेट कार्यक्रम चलाता है- एक जो प्रत्यक्ष होता है और दूसरा सेट जो पूरी तरह से गोपनीय रहता है, या "ब्लैक" या उच्च श्रेणी की परियोजनाओं के रूप में समझा जाता है. यह पूरी तरह से संभव है कि; भारत की प्रमुख रक्षा विज्ञान और इंजीनियरिंग एजेंसी एक और महत्वाकांक्षी कार्यक्रम को विकसित कर रही हो, जो अंतरिक्ष लक्ष्यों पर निर्देशित लेज़र और माइक्रोवेव हथियारों तक विस्तृत है. डीआरडीओ की इस परियोजना के बारे में जनता को तभी पता चलेगा जब संस्थान खुद इस बात को लेकर आश्वस्त हो कि प्रौद्योगिकी अब पूरी तरह से परिपक्व हो चुकी है. इस को लेकर कुछ संकेत हैं- भारतीय परमाणु पनडुब्बी कार्यक्रम का मामला उठाएं, जिसके व्यापक रूप से अस्तित्व में आने और काम जारी होने का अनुमान लगाया गया था, फिर भी दशकों तक इसे लेकर कोई स्पष्ट सबूत मौदूद नहीं थे. फिर भी, भारत के आम लोगों और विश्व को इसके अस्तित्व का पता तब चला जब तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने जुलाई 2009 में INS अरिहंत का विशाखापटनम में उद्घाटन किया.

इन डीईडब्ल्यू सिस्टम में सह-कक्षीय डीईडब्ल्यू शामिल हो सकते हैं, जो ज़मीन या स्थलीय लक्ष्यों पर हमला करने के लिए इन-ऑर्बिट टारगेट या स्पेस बॉर्न डीईडब्ल्यू को शामिल करते हैं और ग्राउंड-बेस्ड डीईडब्ल्यू जो स्पेस बॉर्न टारगेट के खिलाफ हमलों के लिए तैयार होते हैं.

प्रौद्योगिकी के खतरे

हालाँकि, मौजूदा राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (NSA) के रूप में, अजीत डोभाल ने पिछले साल स्वीकार किया कि भारत को नए और बढ़ते राष्ट्रीय सुरक्षा खतरों और चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है और दशक दर दशक यह मांग और जटिल होती जा रही है. ऐसे में, "जरूरत-आधारित" रक्षा प्रौद्योगिकियों के अधिग्रहण और विकास को आगे बढ़ाना, और इन कार्यक्रमों की शुरुआत करना देश के लिए अनिवार्य था. रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने भी इस दृष्टिकोण को मज़बूत करते हुए कहा कि रक्षा प्रौद्योगिकियों और हथियार प्रणाली के विकास को "लागत प्रभावी और समय-कुशल" होना चाहिए.

एक स्तर पर राजनाथ सिंह और डोभाल सही हैं कि भारत और डीआरडीओ ऐसी सैन्य प्रौद्योगिकियों के

अनुसंधान और विकास को लेकर काम नहीं कर सकते जो अभिनव और अत्याधुनिक हो लेकिन केवल उनके लिए. यहाँ भी इतिहास में मौजूद कुछ उदाहरण शिक्षाप्रद साबित हो सकते हैं, उदाहरण के लिए, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पीनेमंडे [Peenemunde] में V-2 रॉकेट कार्यक्रम के पीछे जर्मनी ने ख़ासे संसाधान खर्च किए लेकिन यह बहुत अधिक लाभकारी नहीं साबित हुए. जर्मनी के लिए इनका वास्तविक मूल्य कम साबित हुआ, क्योंकि V-2 रॉकेट उत्पादन संख्या में बेहतर दिखने के बाद भी, रॉयल एयर फोर्स (RAF) द्वारा इन्हें नष्ट किए जाने की दर को लेकर यह नाकाफ़ी साबित हुए. ऐसे में V-2 रॉकेटों ने इस युद्ध में जर्मनी को कोई सकारात्मक परिणाम नहीं दिए. वास्तव में, यह अनुमान लगाया जाता है कि जर्मनी ने V-2 रॉकेटों के अनुसंधान, विकास और उत्पादन पर 500 मिलियन से अधिक का खर्च किया, जबकि इस निवेश पर मिलने वाला लाभ पूरी तरह से अपर्याप्त रहा. इसके अलावा, जैसे कि कई पूर्ववर्ती विश्लेषणों से सामने आया है कि हथियारों के विकास के लिए प्रौद्योगिकी विकसित करने के अपने ख़तरे हैं, क्योंकि ऐसी प्रौद्योगिकी जो देश की व्यापक रक्षा जरूरतों से संबंधित या उसके हित में काम न करे, वह व्यर्थ व्यय साबित हो सकता है.

कई पूर्ववर्ती विश्लेषणों से सामने आया है कि हथियारों के विकास के लिए प्रौद्योगिकी विकसित करने के अपने ख़तरे हैं, क्योंकि ऐसी प्रौद्योगिकी जो देश की व्यापक रक्षा जरूरतों से संबंधित या उसके हित में काम न करे, वह व्यर्थ व्यय साबित हो सकता है.

इस बात को सुनिश्चित करने के लिए, वर्तमान में डीआरडीओ का काम और इसके संसाधनों का आवंटन विशेष रूप से या कम से कम अत्यधिक रूप से ऐसे डीईडब्ल्यू विकसित करने की केंद्रित हो सकता है जो स्थलीय मिशन तक सीमित हों, नतीजतन, भारत डीईडब्ल्यू के पूरे जत्थे के विकास का कार्य नहीं कर सकता है. फिर भी, डीआरडीओ और सरकार को इस बात को प्राथमिकता से तय करना होगा कि उनकी सीमित तकनीकी महत्वाकांक्षाओं के बावजूद, किन अंतरिक्ष हथियारों पर तत्परता से काम करने की ज़रूरत है. क्या सह-कक्षीय डीईडब्ल्यू प्रणालियां भारत की रक्षा जरूरतों के लिए अधिक सार्थक हैं या ज़मीन-आधारित डीईडब्ल्यू अधिक प्रासंगिक हैं, जो अंतरिक्ष-जनित संपत्ति पर निशाना साध सकते हैं? दोनों दिशाओं में किए गए चुनावों के लिए, बजटीय और तकनीकी बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता होगी. सैन्य अंतरिक्ष मिशनों को रक्षात्मक और आक्रामक दोनों क्षमताओं की आवश्यकता होती है.

सैन्य अंतरिक्ष मिशनों को रक्षात्मक और आक्रामक दोनों क्षमताओं की आवश्यकता होती है. रक्षात्मक पक्ष में प्रतिकूल हस्तक्षेप और विनाश से भारतीय अंतरिक्ष संपत्ति की रक्षा करना शामिल है, और आक्रामक पक्ष में भारत द्वारा प्रतिकूल परिस्थितियों में ऐसा करना शामिल है.

रक्षात्मक पक्ष में प्रतिकूल हस्तक्षेप और विनाश से भारतीय अंतरिक्ष संपत्ति की रक्षा करना शामिल है, और आक्रामक पक्ष में भारत द्वारा प्रतिकूल परिस्थितियों में ऐसा करना शामिल है. चीन, अंतरिक्ष और काउंटरस्पेस मिशन के लिए डीईडब्ल्यू को विकसित करने के क्षेत्र में तेज़ी से आगे बढ़ रहा है. ऐस में भारत के पास अंतरिक्ष परिसंपत्तियों की रक्षा और बचाव के लिए पूरी तरह से रक्षात्मक क्षमताओं का पीछा करने की छूट नहीं है, भारत को आक्रामक डीईडब्ल्यू क्षमताओं की आवश्यकता होगी, जो अपेक्षाकृत मामूली प्रणाली हो सकती है, लेकिन इस दिशा में सक्रिय और गंभीर विचार की आवश्यकता

होगी.

साभार –https://www.orfonline.org/hindi से